जैन धर्म में सल्लेखना आत्मघात नहीं आत्मशांति का मार्ग है

• **श्रमणाचार्य विमर्शसागर**

जैन धर्म में सल्लेखना वह साधना है जिसमें साधक अपने आत्म गुणों का आश्रयकर सर्व जीवों के प्रति क्षमा, मैत्री एवं समता भाव को धारण करता है। सल्लेखना मरण के लिए नहीं अपितु मरण पूर्व आत्मशोधन का अचूक उपाय है। सल्लेखना एक व्रत है जिसके द्वार मन-वचन-काय की स्वच्छंद क्रियाओं को विधिपूर्वक नियंत्रित किया जाता है और धैर्य, शांति एवं समता को बढ़ाया जाता है। सल्लेखना एक सर्वश्रेष्ठ अहिंसक साधना है। सल्लेखना भोजन-पान का सम्पूर्ण त्याग नहीं, अपितु अयोग्य भोजन का त्याग एवं योग्य भोजन-पान को ग्रहण करते हुए मरण पर्यंत आत्मा का ध्यान-चिंतन एवं परमात्मा का आश्रय लेना है। सल्लेखना आत्मघात नहीं अपितु आत्मशांति का माार्ग है।

जैन शास्त्रों में सल्लेखना के दो भेद मिलते हैं-

(1) **कषाय सल्लेखना –** जैन श्रमण या श्रावक मरणकाल उपस्थित होने पर कषाय अर्थात् क्रोध, मान, माया, लोभ इन अशुभ परिणामों का त्याग कर अपना चित्त प्रभु गुण चिंतन में लगाता है साथ ही अनासक्त भाव में स्थिर होकर मृत्यु का स्वागत करता है।

(2) **काय सल्लेखना –** जैन श्रमण या श्रावक जीवन भर, व्रत, नियम, संयम धर्म का पालन करते हुए जब शरीर को धर्म पालन के योग्य नहीं समझता अर्थात् मृत्यु को निकट जानता है तब भोजन पान की आसक्ति का परिहार करने के निमित्त भोजन-पान को धीरे-धीरे क्रमश: त्यागता है न कि सम्पूर्ण भोजन-पान का सहसा त्याग करता है। जिससे परिणाम संक्लेषित न हों, उतना ही त्याग करना काय सल्लेखना मानी गई है।

अत: सल्लेखना पीड़ादायक मरण से निकालकर समता भाव पूर्वक मरण करने का मार्ग प्रशस्त करती है जिसे समाधि मरण कहा जाता है।

आत्मघात और सल्लेखना में अन्तर :

(1) आत्मघात करना हिंसा है, जबकि सल्लेखना एक अहिंसक साधना है।

(2) जब कोई व्यक्ति जीवन से निराश हो जाता है, तनावग्रस्त हो जाता है, या क्रोध में उन्मत्त हो जाता है तब बिना विचारे आत्मघात कर लेता है। जबकि सल्लेखना जीवन के प्रति उत्साह, समता, क्षमा और धैर्यपूर्वक की जाने वाली साधना है, जिसमें आती हुई मृत्यु को साक्षी भाव पूर्वक स्वीकार किया जाता है।

(3) आत्मघाती आत्मा की अविनश्वरता की श्रद्धा नहीं करता, जबकि सल्लेखना करने वाला आत्मा की अभयता को स्वीकार करता है।

अत: सल्लेखना को आत्महत्या मानना सर्वथा गलत है। सल्लेखना मृत्यु महोत्सव है।

सती प्रथा और सल्लेखना में अन्तर :

(1) सती प्रथा एक थोपी हुई बलात् चेष्टा है। जिसमें अग्नि प्रवेश जैसी हिंसक क्रिया है। जबकि सल्लेखना सभी के लिए अनिवार्य नहीं, अपितु धर्म मार्ग पर चलने वाले श्रमण या श्रावक के द्वारा सात्विक रीति से की जाने वाली साधना है। इसमें अग्नि प्रवेश जैसी हिंसक क्रिया का अभाव है।

(2) सती प्रथा में पति के मरण होने पर किसी भी उम्र की स्त्री को अग्नि प्रवेश की क्रूरतम बाध्यता है,जबकि सल्लेखना, मरण उपस्थित होने पर समता परिणाम रखने की साधना है इत्यादि।

जैन धर्म में सल्लेखना करने वाले को जब मृत्यु की इच्छा करना दोष माना गया है। तब सल्लेखना मृत्यु के लिए कैसे मानी जा सकती है? वास्तव में सल्लेखना मृत्यु के कारण उपस्थित होने पर परिणामों में समता भाव रखने की साधना का नाम है। ऐतिहासिक महापुरुष सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य ने दिगम्बर जैन संत भद्रबाहु स्वामी से जिनदीक्षा लेकर अपने गुरु की सल्लेखना पूर्वक समाधि कराई। इसके पूर्व तीर्थंकर आदिनाथ से लेकर महावीर स्वामी भगवान राम तक अनेक संतों ने इस व्रत का पालन कर आत्महित किया।

'जयदु जिणागम पंथो।'
'जिनागम पंथ जयवंत हो।'